दैनिक जागरण

यदि गलती सुधारना चाहते हैं तो पहले उसे स्वीकार करना सीखिए

नागरिकता कानून की परख

सुप्रीम कोर्ट ने नागरिकता संशोधन कानून पर रोक लगाने की मांग को जिस तरह अस्वीकार किया उससे एक बड़ी हद तक इस प्रचार की हवा ही निकली कि यह कानून इस कदर संविधान विरोधी है कि तुरंत खारिज हो जाएगा। यह भी उल्लेखनीय है कि सुप्रीम कोर्ट ने नागरिकता संशोधन कानून के खिलाफ दायर याचिकाओं पर केंद्र सरकार से जवाब मांगते हुए इस मामले की सुनवाई को लेकर वैसी कोई तत्परता नहीं दिखाई जैसी तमाम याचिकाकर्ता चाह रहे थे। अब जब सुप्रीम कोर्ट में नागरिकता कानून की संवैधानिकता की परख तय हो गई है तब फिर क्या यह उचित नहीं होगा कि उसका हिंसक विरोध करना बंद किया जाए? कम से कम उन्हें तो यह काम करना ही चाहिए जो संविधान, लोकतंत्र और न्याय की दुहाई देने लगे हुए हैं। दुर्भाग्य से इसके आसार कम ही हैं, क्योंकि इस कानून के अराजक विरोध के पीछे एक बड़ी वजह अज्ञानता भी है और शरारत भरी राजनीति भी। इसी राजनीति के तहत नागरिकता कानून को लेकर सुनियोजित तरीके से झूठ फैलाया जा रहा है। जो इस सच से परिचित हो रहे हैं कि नागरिकता कानून का किसी भी भारतीय नागरिक से कोई लेना-देना नहीं उन्हें प्रस्तावित एनआरसी से भयाक्रांत करने की कोशिश हो रही है। कोई एनआरसी को नागरिकता कानून का हिस्सा बताने में जुटा है तो कोई उसे धार्मिक आधार पर नागरिकों की पहचान की कवायद साबित करने की कोशिश कर रहा है। इसे शरारत के अलावा और कुछ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अभी तो प्रस्तावित एनआरसी की प्रक्रिया ही नहीं तय की गई है।

नागरिकता कानून को लेकर जारी दुष्प्रचार के खिलाफ केंद्र सरकार को और अधिक सक्रियता दिखाने की आवश्यकता इसलिए है, क्योंकि यह साफ है कि कई राजनीतिक और गैर राजनीतिक संगठन लोगों को बरगलाकर अपना उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं। वास्तव में इसी कारण नागरिकता कानून का विरोध थमने का नाम नहीं ले रहा है। नागरिकता कानून को लेकर किस तरह राजनीतिक रोटियां सेंकने का काम हो रहा है, इसका संकेत इससे भी मिलता है कि सुप्रीम कोर्ट में इस कानून के खिलाफ दायर करीब साठ याचिकाओं में से एक बड़ी संख्या में राजनीतिक दलों या फिर नेताओं ने दायर की हैं। यह कोई नई-अनोखी बात नहीं, लेकिन यह तो विचित्र है ही है कि नागरिकता कानून पर सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाने वाले दल लोगों को सड़कों पर उतरने के लिए भी उकसा रहे हैं। इनमें वे भी शामिल हैं जो एक समय बांग्लादेश और पाकिस्तान में सताए गए अल्पसंख्यकों के लिए वैसी ही राहत चाह रहे थे जैसी उन्हें नागरिकता संशोधन कानून के जरिये दी जाने वाली है।

कार्यशैली पर सवाल

उत्तराखंड परिवहन निगम की कार्यशैली पर अक्सर सवाल उठते रहे हैं। इसी कड़ी में एक बार फिर निगम सुर्खियों में है। अब टाटा कंपनी से 150 नई बसें खरीदने का मामला चर्चा में है। खामियों से भरी इन बसों को हालांकि परिवहन निगम कंपनी को वापस कर रहा है और बताया जा रहा है कि सभी बसों का गियर बॉक्स बदला जाएगा, लेकिन सवाल यह है कि बस खरीद से पहले विभिन्न प्रक्रियाओं को पूरा किया गया, फिर खराब बसें कैसे पहुंच गईं। यहां तक कि परिवहन निगम के अधिकारी इसके लिए गोवा भी गए। मामला तब खुला जब चालकों ने बसों का परीक्षण किया। पता चला कि बसों का गियर लीवर सही नहीं है। अब दिल्ली के सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ रोड ट्रांसपोर्ट (सीआइआरटी) की रिपोर्ट में साफ कर दिया गया है कि गियर लीवर खराब हैं। जांच में यह भी पता चला कि गियर लीवर के मेन प्वाइंट के ठीक पीछे जो यात्री सीट दी गई है, वह खतरनाक है। यात्री का पांव गियर लीवर से टकरा सकता है और इससे हादसे का खतरा है। यह अलग बात है कि मामले के तूल पकड़ने पर हरकत में आए अफसरों ने बसों की तकनीकी जांच सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ रोड ट्रांसपोर्ट दिल्ली से कराने के आदेश भी दिए। साथ ही टाटा कंपनी को होने वाले 37 करोड़ के भुगतान पर भी रोक लगा दी गई। बात सिर्फ इतनी ही नहीं है, अशोका लीलैंड की बसों में भी खामियां सामने आई हैं। परिवहन निगम ने बसों का जो डिजाइन कंपनी को सौंपा था, उसका अनुपालन ही नहीं किया गया। साफ है कि परिवहन निगम की कार्यप्रणाली में कहीं तो खोट है। आखिर निगम की टेक्निकल टीम ने पहले इन खामियों को क्यों नहीं पकड़ा। यदि परिवहन निगम के पास बसों की खरीद से पहले के परीक्षणों के लिए फुलप्रूफ सिस्टम है तो ये नौबत क्यों आई। सवाल यह भी है कि सिर्फ टाटा ही नहीं, अशोका लीलैंड से खरीदी जाने वाली बसों में कमियां दिखीं। बात सिर्फ यहीं खत्म नहीं होती, निगम के कुछ परिचालक सवारियों को बेटिकट यात्रा कराने से नहीं हिचकिचाते तो बसों में अवैध तरीके से सामान ढोने के मामले भी सामने आते रहे हैं। इस पूरे प्रकरण को हल्के में नहीं लिया जा सकता। वजह यह है कि परिवहन निगम में हजारों यात्री सफर करते हैं और यह उनकी सुरक्षा का सवाल है। जरा सी चूक सैकड़ों जिंदगियों पर भारी पड़ सकती है। यह सही है कि दोनों कंपनियों को बसों को दुरुस्त करने को कह दिया गया है, लेकिन इतना ही पर्याप्त नहीं है। परिवहन निगम को अपने सिस्टम को दुरुस्त करना होगा। लापरवाह अफसरों के खिलाफ सख्त कार्रवाई कर संदेश देने की भी जरूरत है।

दुष्कर्म पर नेताओं का दिखावटी आक्रोश

जगदीप एस छोकर

जेएस वर्मा समिति के इस निष्कर्ष की अनदेखी जारी है कि चुनावी प्रक्रिया में ठोस सुधार किए बिना महिलाओं के विरुद्ध अपराधों में कमी करना असंभव है

हैदराबाद में एक पशु चिकित्सक युवती के साथ सामूहिक दुष्कर्म और उसकी हत्या कर उसके शव को जलाने की जो नृशंस घटना घटी उससे पूरे देश में गम और गुस्सा दिखाई दिया। देश भर के लोगों का रोष स्वाभाविक भी था, लेकिन जो आक्रोश संसद में और संसद के बाहर विभिन्न दलों के नेताओं ने जाहिर किया वह कुछ अटपटा-सा लगा। अटपटा इसलिए कि जो नेता इस बर्बरता पर इतना आक्रोश दिखा रहे थे उन्हें यह बात क्यों नहीं याद आई कि उनके अपने ही दल इसी मुद्दे पर क्या करते हैं? इस घटना पर छह दलों के नेताओं ने सबसे अधिक आक्रोश जताया। ये दल हैं समाजवादी पार्टी, द्रविड़ मुनेत्र कषगम , तृणमूल कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, बहुजन समाज पार्टी और कांग्रेस। इनमें से दो दलों भाजपा और कांग्रेस ने 2019 के लोकसभा चुनाव में ऐसे उम्मीदवारों को टिकट दिए जिन्होंने अपने शपथपत्र में लिखा था कि अदालतों में उनके विरुद्ध दुष्कर्म के मुकदमे चल रहे हैं। ऐसे लोगों को टिकट देने में ये दो दल अकेले नहीं हैं। राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी, वाइएसआर कांग्रेस पार्टी और शिवसेना ने भी ऐसे कई उम्मीदवारों को टिकट दिए, जिनके विरुद्ध दुष्कर्म के मुकदमे चल रहे थे। बाकी आक्रोश दिखाने वाले नेताओं के दल भी इसमें पीछे नहीं हैं। उन्होंने 2019 के लोकसभा चुनाव में दुष्कर्म के मुकदमे वालों को टिकट भले ही न दिया हो, लेकिन उनकी पृष्ठभूमि कोई बाकी दलों से अलग नहीं है। बसपा ने लगातार तीन लोकसभा चुनावों 2004, 2009 और 2014 में दुष्कर्म के आरोप वाले उम्मीदवारों को टिकट दिए। सपा ने भी ऐसा ही किया था। इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि बीते दिनों उन्नाव के चर्चित दुष्कर्म मामले में जिस कुलदीप सिंह सेंगर को दोषी करार दिया गया वह भाजपा से निष्कासित विधायक है।

किसी भी समाज के लिए यह बहुत दुखदाई होगा कि उसकी संसद में ऐसे सदस्य हों, जिन पर दुष्कर्म जैसे घृणित अपराध के आरोप लगे हों। खेद है कि हमारी वर्तमान संसद में तीन सदस्य ऐसे हैं जिन पर दुष्कर्म के मुकदमे चल रहे हैं। ये तीन सांसद भाजपा, कांग्रेस और वाईएसआर कांग्रेस पार्टी का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह तो देश की सर्वोच्च पंचायत और लोकतंत्र के मंदिर संसद का हाल है। अगर हम विधानसभाओं में जाएं तो वहां की हालत तो और भी खराब है। अगर दुष्कर्म से आगे बढ़कर ऐसे उम्मीदवारों या विधायकों की संख्या देखें जो 'महिलाओं के विरुद्ध आरोपों' में आरोपित हैं तो वह संख्या और भी अधिक हो जाती है। सवाल है कि दुष्कर्म के खिलाफ नेताओं का यह आक्रोश दिखावटी क्यों है?

आज से करीब सात साल पहले हैदराबाद जैसी बर्बर दुष्कर्म की घटना दिल्ली के वसंत विहार इलाके में घटी थी। चूंकि यह बर्बरता देश की राजधानी में हुई इसलिए उसे लेकर विरोध-प्रदर्शन कहीं ज्यादा देखने को मिला। यह रोष जनता में तो था ही, राजनीतिक दलों के नेताओं ने भी उसकी बहुत भर्त्सना की और कानून को

अवधेश राजपूत

और भी सख्त बनाने की मांग की। इस विरोध के कारण तत्कालीन केंद्र सरकार ने उच्चतम न्यायालय के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश जेएस वर्मा की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय समिति बनाई। उसे देश के आपराधिक कानूनों की समीक्षा करने का काम सौंपा गया। साथ ही यह बताने के लिए कहा गया कि आखिर इन कानूनों में ऐसे क्या बदलाव किए जाएं कि महिलाओं के विरुद्ध अपराध करने वालों के खिलाफ मुकदमे बिना किसी विलंब के चलें? किस तरह ऐसे मामलों की त्वरित सुनवाई कर दोषियों को और भी कड़ी सजा दी जा सके? इसमें कोई दो राय नहीं कि जेएस वर्मा समिति ने बहुत मेहनत से काम किया। उसने 30 दिनों में ही सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंप दी। रिपोर्ट में उसने बहुत सारे सुझाव दिए। उन सुझावों के आधार पर कानून में कुछ छोटे-मोटे बदलाव किए गए, लेकिन जैसा कि देख सकते हैं कि अपराधियों पर उनका कोई खास असर नहीं हुआ। हैदराबाद की जघन्य घटना से भी यह साबित होता है।

जेएस वर्मा समिति ने अपनी रिपोर्ट में 44 पृष्ठों का एक अध्याय भी लिखा था, जिसका शीर्षक है 'चुनाव सुधार'। उस अध्याय में लिखा है कि देश में महिलाओं के विरुद्ध अपराध रोकने के लिए चुनावी प्रक्रिया में सुधार करना अत्यंत आवश्यक है। दूसरे शब्दों में कहें तो चुनावी प्रक्रिया में ठोस सुधार किए बिना महिलाओं के विरुद्ध अपराधों में कमी करना असंभव है। समिति ने यह भी कहा था कि जब तक संसद में ऐसे लोग बैठे होंगे जो आपराधिक मामलों में आरोपी हैं तब तक देश की कानून बनाने की शैली और तौर-तरीके पर भी विश्वास करना बहुत कठिन है। समिति ने लिखा कि वह यह जानकर चकित रह गई कि उस समय छह विधायक ऐसे थे जिन्होंने स्वयं शपथ लेकर लिखा था कि उनके विरुद्ध दुष्कर्म के मुकदमे चल रहे हैं। समिति इस पर भी बहुत चकित हुई थी कि पिछले पांच वर्षों में विभिन्न राजनीतिक दलों ने विधानसभा चुनावों में 27 ऐसे उम्मीदवारों को टिकट दिए जिनके विरुद्ध दुष्कर्म के मुकदमे चल रहे थे। समिति ने उच्चतम न्यायलय के विचारों का जिक्र करते हुए कहा था कि स्वाधीनता के 50 वर्ष पूरे होने पर संसद ने अगस्त 1997 में सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया था, जिसमें राजनीति के अपराधीकरण पर घोर चिंता जाहिर की गई थी। उसमें कहा गया था कि राजनीति के अपराधीकरण को समाप्त करने के भरसक प्रयत्न किए जाएंगे। उस अध्याय के अंत में समिति ने लिखा कि राजनीति में अपराधीकरण तभी समाप्त हो सकता है जब राजनीतिक दल यह करना चाहेंगे।

समिति ने आगे लिखा कि हम तो राजनीतिक दलों से केवल निवेदन, प्रार्थना, विनती ही कर सकते हैं कि वे इन सब अच्छे इरादों को वास्तव में कारगर करें। यही बात 25 सितंबर, 2018 को एक बार फिर उच्चतम न्यायालय के समक्ष आई। पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन ने एक जनहित याचिका में उच्चतम न्यायालय से प्रार्थना की कि जिनके विरुद्ध गंभीर आरोप हैं और जिनका संज्ञान न्यायालय ले चुका है उन्हें चुनाव में उम्मीदवार बनाने पर कानूनी तौर पर रोक लगाई जाए। हालांकि उच्चतम न्यायालय ने ऐसा करने से यह कहकर मना कर दिया कि कानून बनाने का अधिकार केवल संसद को है, लेकिन साथ ही उसने संसद से भी कहा कि ऐसे कानून की देश को शीघ्र आवश्यकता है। इसके बाद न्यायालय ने संसद से गुजारिश की कि वह देशहित में जल्द से जल्द यह कानून बनाए। यह बहुत ही दुख की बात है कि इस दिशा में अभी तक कुछ नहीं हुआ। आखिर इस सबको देखते हुए हैदराबाद जैसी भयावह घटनाओं पर उनकी ओर से आक्रोश व्यक्त करना अगर दिखावा नहीं है तो और क्या है?

(लेखक आइआइएम अहमदाबाद में प्रोफेसर, डीन एवं डायरेक्टर इंचार्ज रहे हैं)

response@jagran.com

अज्ञानता से उपजा हिंसक विरोध

रामिश सिद्दीकी

नागरिकता कानून पर अशांति फैलाने वाले अपनी ऊर्जा जाया करने के साथ ही अपनी छवि से भी खेल रहे हैं

संसद से नागरिकता संशोधन विधेयक के पारित होने और उसके कानून का रूप लेने के बाद देश का माहौल यकायक बदल गया। इसका देश के कई हिस्सों में विरोध हो रहा है। बंगाल और दिल्ली में तो विरोध के नाम पर बड़े पैमाने पर आगजनी और तोड़फोड़ देखने को मिली। इस हिंसा में सरकारी और गैर सरकारी संपत्ति को भारी नुकसान पहुंचाया गया। इस कानून को लेकर हर किसी के पास कुछ न कुछ कहने को है, लेकिन नागरिकता कानून कोई नया कानून नहीं है। इसमें तो संशोधन कर यह व्यवस्था भर की गई है कि बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान में धार्मिक आधार पर उत्पीड़न के शिकार उन अल्पसंख्यकों को तय प्रक्रिया के तहत नागरिकता दी जाएगी जो दिसंबर 2014 के पहले भारत आ चुके हैं। केवल अल्पसंख्यकों को इसीलिए शामिल किया गया है, क्योंकि बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान में इस्लाम राजकीय धर्म है।

इसका विरोध कर रहे लोग इस कानून को वापस लेने की मांग करते हुए यह भी कह रहे हैं कि उन्हें एनआरसी यानी राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर स्वीकार नहीं। लोकतांत्रिक देश में कोई किसी भी कानून का विरोध कर सकता है, लेकिन अभी तो विरोध के बहाने हिंसा अधिक हो रही है। इसी कारण सवाल उठ रहे हैं कि आखिर यह विरोध हो रहा है या फिर अराजकता फैलाई जा रही है?

हालांकि प्रधानमंत्री और गृहमंत्री की ओर से बार-बार यह कहा जा रहा है कि नागरिकता कानून का किसी भी भारतीय नागरिक से कोई वास्ता नहीं और यह कानून तो उत्पीड़न के कारण भारत आए लोगों को नागरिकता देने का है, न कि किसी की नागरिकता लेने का, फिर भी विरोध के नाम पर हिंसा का सहारा लिया जा रहा है। जिन तीन पड़ोसी देशों में उत्पीड़न के शिकार लोगों के पास भारत भाग आने के अलावा यदि कोई विकल्प है तो यही कि या तो वे मारे जाएं या फिर अपना धर्म त्याग दें। क्या यह एक हकीकत नहीं और क्या इसी कारण बांग्लादेश, पाकिस्तान में अल्पसंख्यक लगातार तेजी से कम नहीं होते जा रहे हैं? नागरिकता कानून का पूर्वोत्तर में जो विरोध हो रहा है वह शेष देश के विरोध से अलग है। पूर्वोत्तर के लोगों को भय है कि पड़ोसी देशों से आए लोगों को यदि नागरिकता मिली तो उनकी संस्कृति और भाषा के लिए खतरा पैदा हो जाएगा। ऐसे किसी खतरे की आशंका शेष देश के लोगों को नहीं-भले ही वे हिंदू हों या मुसलमान, फिर भी आम मुसलमानों में यही डर भरा जा रहा है कि यह कानून उनके

खिलाफ है या फिर इससे उनका अहित हो सकता है। यह एक सोचा-समझा कुप्रचार है। यह कुप्रचार बार-बार के इस स्पष्टीकरण के बाद भी जारी है कि देश के किसी भी नागरिक को न तो नागरिकता कानून से डरने की जरूरत है और न ही प्रस्तावित एनआरसी से। यदि नागरिकता कानून और प्रस्तावित एनआरसी को लेकर सबसे ज्यादा आशंका मुस्लिम समाज के बीच है तो इसका एक बड़ा कारण मुस्लिम समाज का नेतृत्व है जो अपने लोगों को सही जानकारी देने के बजाय उन्हें बरगलाने और उनमें असुरक्षा की भावना भरने का काम कर रहा है। राजनीतिक स्वार्थ के चलते मुस्लिम समाज को किस्म-किस्म के खतरों का भय दिखाकर उसे सड़क पर उतारने का काम एक लंबे अरसे से होता चला आ रहा है। यह अभी भी हो रहा है। यह नकारात्मक राजनीति तो बर्बादी का रास्ता है। दुर्भाग्य से यह नकारात्मक राजनीति शिक्षा संस्थानों में भी देखने को मिल रही है। नकारात्मक राजनीति में फंसा कोई समाज ढंग से तरक्की नहीं कर सकता। समाज को समृद्ध करने वाले शिक्षा संस्थान आज राजनीतिक टकराव और अशांति का केंद्र बन रहे हैं, जबकि इस्लाम में शांति को सबसे बड़ी अच्छाई कहा गया है।

शांति के माहौल को कमजोर करने वाली किसी भी चीज का इस्लाम में कोई स्थान नहीं है। मानव इतिहास साक्षी है कि शांति का माहौल और सकारात्मकता दुनिया में प्रगति और विकास का आधार है। इस्लाम की शिक्षाओं का सार यही है कि जिस समाज में अशांति होगी वहां लोग सामान्य गतिविधि में संलग्न नहीं हो सकते। भारतीय मुसलमानों को सकारात्मकता की डोर थामने की जरूरत है और साथ ही ऐसे खुदगर्ज नेताओं से खुद को बचाने की भी जिन्हें समाज की कम और अपने स्वार्थ की चिंता ज्यादा है। पैगंबर मुहम्मद साहब ने ज्ञान प्राप्त करने पर बहुत अधिक जोर दिया और उसे सभी के लिए जरूरी बताया, लेकिन आज मुस्लिम समाज में शिक्षा की कमी का मसला बार-बार उठता है। ऐसा क्यों है, इस पर आम मुसलमानों को ही सोचना होगा, क्योंकि उनके तथाकथित नेता तो इस पर विचार ही नहीं करना चाहते।

जितना जरूरी ज्ञान हासिल करना है उतना ही नकारात्मक विचारों से दूर रहना। पैगंबर साहब का सबसे ज्यादा जोर शांति पर रहा। एक अवसर पर पैगंबर साहब और उनके साथी उम्रह के लिए मदीना से मक्का की ओर रवाना हुए, लेकिन रास्ते में उन्हें हुदैबिया नामक स्थान पर रोक दिया गया। इससे हालात तनावपूर्ण हो गए, क्योंकि मक्का में तीर्थयात्रा पर आने के लिए किसी को रोका नहीं जाता था। इस रोक के बावजूद पैगंबर साहब ने शांति की बहाली को महत्व दिया और वह अपने विरोधियों के साथ शांति संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए तैयार हो गए और वह भी तब जब संधि की शर्तें विरोधियों के पक्ष में थीं। इसे हुदैबिया संधि कहा गया। यह संधि केवल इसलिए संभव हो पाई, क्योंकि पैगंबर साहब ने शांति को सर्वोपरि समझा। यह प्रसंग इस्लाम में शांति के महत्व को दर्शाता है। आमतौर पर लोग कहते हैं कि पहले न्याय मिले फिर शांति आएगी, लेकिन हर कीमत पर शांति इस्लाम का प्रमुख सिद्धांत है। समाज में जब शांति होगी तभी सभी समस्याओं के हल का अवसर मिल सकता है। आज क्या हो रहा है? उग्र और अराजक विरोध का सहारा लिया जा रहा है। आखिर सड़कों पर उतरे कितने लोग जानते हैं कि नागरिकता कानून किसके लिए है? अशांति फैलाने वाले केवल अपनी ऊर्जा ही जाया नहीं कर रहे, बल्कि उसे दूसरों के हित में इस्तेमाल करने के साथ ही अपनी छवि से भी खेल रहे हैं। मुस्लिम समाज को समझना होगा कि यदि वह नकारात्मकता को नहीं त्यागता तो वह अपनी अज्ञानता से उपजी असुरक्षा की भावना से बाहर भी नहीं आ सकता।

(लेखक इस्लामिक मामलों के जानकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

भिक्षालय

यह दृष्ट संसार अनेक प्रकार के याचकों अथवा भिखारियों का एक बड़ा अभिनय स्थल है। यहां भांति-भांति के अभिनयों एवं भाव-भंगिमाओं द्वारा मनुष्य अपने जीवन यापन के तरीके ढूंढता रहता है। बिना प्रभुकृपा के न उसे अच्छा परिवेश मिल सकता है, न कुछ अच्छा करने की प्रेरणा ही। जीवनपर्यंत विगत कर्म का लेखा-जोखा उसे वही-वही करने को उत्प्रेरित करता रहता है जो-जो उस कर्म के तहत उसे करना होता है।

बार-बार अज्ञानता के अहंकार एवं अंधकार में डूबा जीव अथवा मनुष्य हर अच्छे काम का श्रेय स्वयं को देने का भ्रम करता रहता है, लेकिन इस रहस्य से प्रायः अनभिज्ञ रहता है कि यदि किसी भी अच्छे, उत्तम एवं सफल काम का मूल केवल वही है तो फिर वह कार्य उसके जीवन की इतनी लंबी अवधि बीतने पर भी पहले क्यों नहीं संपन्न हुआ? भिखारी जीव ईश्वर से जब-तब याचक बन कुछ न कुछ मांगता रहता है। उन्हीं की अनुकंपा से कुछ पाकर इतराता है और अपनी अज्ञानतावश स्वयं को कर्ता मानता रहता है। जब-जब कर्ता भाव से चालाकीवश मनुष्य अपने लक्ष्य को छल-बल से प्राप्त करना चाहता है तो लक्ष्य उससे उतना ही दूर होता चला जाता है और परेशानियां मुफ्त में उसकी चालाकियों का परीक्षण करने के लिए तैयार रहती हैं। प्रभुकृपा का याचक व्यक्ति कोई भी कार्य कर्ताभाव से नहीं करता, बल्कि याचना के उपरांत मिले किसी भी प्रकार के प्रभु निर्णय को ही अपना प्रारब्ध मान वह निष्काम भाव से अपने अभीष्ट की ओर अग्रसर होता चला जाता है। निष्कंटक पथ में स्वयं लक्ष्य अपने को उसे सौंपने को तत्पर रहते हैं। प्रभु द्वारा अपने भक्त के लिए सुनिश्चित मार्ग में बाधाएं अथवा कष्ट झांकने का भी साहस नहीं जुटा पातीं।

इस संसार रूपी भिक्षालय में भिक्षुक बन प्रभुकृपा के पुण्य-प्रसाद से कोई भी रंक राजा बनने का गौरव हासिल कर सकता है। इसके विपरीत संपूर्ण वैभवों से परिपूर्ण नृप भी मानसिक रूप में भिक्षुक सा जीवन जीने के लिए विवश हो सकता है।

प्रो. दिनेश चमोला 'शैलेश'

पीड़ा देता हिंसक वातावरण

अंशुमाली रस्तोगी

अपनी ही आंखों के सामने अपने ही देश, समाज और नागरिकों को जलते देखना भला किसे अच्छा लगेगा

यह हमें क्या हो गया है? किस राह चल पड़े हैं हम? जिधर आंख उठाकर देखो, उधर ही हिंसा और उपद्रव नजर आ रहा है। सड़कों पर जो हिंसा है वह तो है ही, सोशल मीडिया पर भी यही सब रात-दिन चल रहा है। भड़काऊ तस्वीरें, बयान, बातें वहां परोसी जा रही हैं। लिखने की आजादी है तो क्या कुछ भी, बिना सोचे-समझे, लिखेंगे। हर कोई लगा पड़ा है, राजनीति की गंगा में अपने हाथ धोने। इस पर खुद ही लगाम कसिए। क्या सोशल मीडिया पर यही सब करने के लिए आए थे हम! यह मंच हिंसा पैदा करने के लिए तो नहीं था! एक जरिया हमें मिला था अपनों से जुड़े रहने का। दुनिया को खुद से जोड़े रखने का। दूरियों को कम करने का। अपनी बात को अपने तक ही सीमित न रख, पूरी दुनिया में फैलाने का। नए रिश्ते कायम कर उन्हें नया नाम, नई पहचान देने का। वक्त-जरूरत किसी की मदद करने का। अपने विचारों को लिखने और दूसरे के विचारों को पढ़ने का। तर्कपूर्ण बहस करने का। कुछ अच्छा पढ़ने का। किंतु हमने तो इस खूबसूरत माध्यम को अपनी कुत्सित राजनीति और सांप्रदायिक सोच से नष्ट कर डाला।

कोई भी संवेदनशील व्यक्ति किसी भी तरह की हिंसा और उपद्रव को सहन नहीं करेगा। उसे हिंसात्मक वातावरण पीड़ा देगा। अपनी ही आंखों के सामने अपने ही देश, समाज और नागरिकों को जलते देखना भला किसे अच्छा लगेगा। हिंदू-मुसलमान होने से पहले हम एक इंसान हैं, यह मत भूलिए। मन में एक-दूसरे के प्रति इंसानियत का भाव रखते हैं, लेकिन किसी के भी बहकावे में आकर हम अपनों के दुश्मन बन जाएं, कितना कठिन है इसे जज्ब कर पाना। जरा सोचिए। कितनी खराब आदत बना ली है हर मसले को 'राजनीतिक रंग' देने की। नेता तो राजनीति का दांव खेल निकल लेंगे, मगर हम-आप कभी धर्म तो कभी जाति की संकीर्णताओं में बांट दिए जाएंगे। मत भूलें हम हिटलर के नहीं भगत सिंह, विवेकानंद, गांधी, आजाद, डॉ. आंबेडकर के देश हैं। कितने ही क्रांतिकारियों ने अपनी जान की बाजी लगाकर इस देश को ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त करवाया था। उन्होंने कभी हमें बंटने नहीं दिया। देश की एकता को मजबूत रखा। खुद फना हो गए, ताकि हम और हमारी पीढ़ियां एक आजाद और सुरक्षित जीवन जी सकें।

ऐसा कुछ भी गलत अपने देश में न होने दें कि पड़ोसी मुल्क हम पर हंसे। निरंतर फैल रही हिंसा को हमें ही रोकना होगा। देश की धर्मनिरपेक्षता और लोकतांत्रिक मूल्यों को बचाना होगा। अभी हाल ही में हमने गांधी की 150वीं जयंती मनाई है। उनके दिखाए-बताए रास्तों पर चलने का प्रण लिया है, गांधीवाद और गांधी-मार्ग की तारीफ की है। फिर, उसके बाद यह बहशीपन! जरा ठंडे दिमाग से सोचिए इस पर कि हम यह क्या और क्यों कर रहे हैं? यह मुल्क हम सब का है। इसकी साझी विरासत है। क्यों आते हैं किसी के बहकावे में। अपनी बुद्धि का इस्तेमाल कीजिए। इस हिंसा का जवाब देना होगा हमें अपनी आगे वाली पीढ़ी को। जरा बताएं, उनसे आंखें मिलाकर क्या दे पाएंगे हम उन्हें जवाब? बोलें।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकर हैं)

किसके हितों की अनदेखी

'भारतीय हितों की अनदेखी' शीर्षक से शंकर शरण का लेख जिन मान्यताओं को आधार बनाकर लिखा गया है एकबारगी उनकी समीक्षा आवश्यक है। जैसे-पहली मान्यता है कि दुनिया भारत को एक हिंदू राष्ट्र के रूप में देखती है, परंतु वास्तविकता इसके विपरीत है। संविधान में भारत को एक 'पंथनिरपेक्ष' राष्ट्र घोषित किया गया है और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी भारत की छवि एक पंथनिरपेक्ष राष्ट्र की है। दूसरी मान्यता है कि नागरिकता संशोधन अधिनियम के जरिये हिंदू समेत छह अल्पसंख्यक समुदायों को शरण देने का विरोध हो रहा है, जबकि वास्तविकता में विरोध पड़ोसी देशों में इन उत्पीड़ित समुदायों को शरण देने को लेकर नहीं, बल्कि शरण देने में बरते जा रहे भेदभाव को लेकर है। एक समुदाय विशेष को उसमें शामिल न करने को लेकर है। एक मान्यता यह भी है कि शिक्षा में हिंदू ग्रंथों की अनदेखी की गई है, लेकिन इससे सहमत नहीं हुआ जा सकता, क्योंकि हमने अपने विद्यार्थी जीवन में 'गीता 'और 'रामायण 'जैसे ग्रंथों के अंशों को पाठ्यक्रम के हिस्से के रूप में पढ़ा है। हालांकि इस लेख की कुछ बातों पर सहमत हुआ जा सकता है। जैसे कश्मीर विस्थापन के मुद्दे पर देश के बौद्धिक वर्ग की चुप्पी, अक्सर चयनात्मक विरोध करने की उनकी प्रवृत्ति आदि निंदनीय हैं और देश के लिए हानिकारक भी। हिंसक प्रवृत्तियों के समर्थन को तो बुद्ध और गांधी के इस देश ने कभी स्वीकारा ही नहीं। हिंसा करने वालों पर उचित और सख्त कार्रवाई होनी चाहिए। चाहे वे किसी भी धर्म, संप्रदाय या पंथ से जुड़े हों। एक और मान्यता है कि यूरोपीय देशों की मुस्लिम आव्रजन पर पाबंदी की नीति का भारत को अनुसरण करना चाहिए। यहां लेखक यह भूल गए कि यूरोप के बहुसंख्यक धर्म 'ईसाइयत' और इस्लाम में काफी साम्य

मेलबाक्स

है। दोनों सामी धर्म हैं और अपने प्रचार-प्रसार में संलग्न भी। अतः उनकी टकराहट स्वाभाविक है, परंतु भारतीय परिस्थितियों में मुस्लिम आव्रजन पर पाबंदी नहीं लगाई जा सकती, क्योंकि आजाद भारत सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखता रहा है। 'वसुधैव कुटुंबकम' तथा 'सर्वधर्म समभाव' इस संस्कृति की विशेषता हैं। मेरी मुख्य आपत्ति शंकर शरण द्वारा भारत को 'हिंदू राष्ट्र' एवं 'दुनिया का एकमात्र हिंदू राष्ट्र' कहने और 'भारत की आत्मा और नियति को हिंदू धर्म से जोड़ने' पर है, क्योंकि इस देश की आजादी में अपने प्राणों की आहुति देने वाले शहीदों, राष्ट्र की नींव तैयार करने वाले दूरदर्शी संविधान निर्माताओं ने धर्म को भारत के निर्माण का आधार नहीं माना था।

अनुराग यादव, नेहरू विहार, नई दिल्ली

देश प्रेम सर्वोपरि

नागरिक संशोधन कानून का कुछ स्वार्थी किस्म के लोग विरोध कर रहे हैं। किसी भी बात का समर्थन अथवा विरोध करना हमारा अधिकार है। क्या कोई भी कानून हमको सार्वजनिक वाहनों, इमारतों, किसी व्यक्ति विशेष को अथवा किसी भी प्रकार से जान-माल की हानि पहुंचाने का अधिकार देता है? शिक्षित वर्ग खासकर विद्यार्थियों को राजनीतिक फायदे के लिए मोहरा बनाया जाता है। विद्यार्थियों के बीच कुछ असामाजिक तत्वों के पकड़े जाने से यह पता चलता है कि हम अपराधी किस्म के लोगों की चक्रव्यूह का शिकार हो रहे हैं। कितने उपद्रवियों को तो यह भी नहीं पता की हम विरोध कर किस बात पर रहे हैं। हिंदू, मुस्लिम, सिख, इसाई भाईचारे के साथ रहते हैं। कई मुस्लिम गुरुओं ने भी इस बिल को ठीक मानकर लोगों से शांति की अपील की है जो देश के आपसी प्यार और भाईचारे के लिए अच्छी बात है। वहीं ऐसे स्वार्थी किस्म के लोगों से अपने समाज को सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी हम सब की बनती है। धर्म तथा जाति से पहले देशप्रेम है।

आचार्य राम कुमार बघेल, पलवल

मंथन करने की है जरूरत

नागरिक संशोधन कानून और एनआरसी के विरोध में छात्रों द्वारा शुरू हुआ आंदोलन अब एक समुदाय के आंदोलन में तब्दील होता दिख रहा है। छात्रों की आड़ में हिंसा, आगजनी और सार्वजनिक संपत्तियों का नुक्सान किया जा रहा है। जिस देश के लिए लड़ रहे हैं, उसकी ही संपत्ति को नष्ट भी कर रहे हैं। जामिया में पुलिस की बर्बरता बहुत ही निंदनीय है। इस पर जांच जरूरी है, लेकिन विरोध के दौरान सार्वजनिक संपत्तियों को नुक्सान पहुंचाने वाले लोग भी किसी अपराधी से कम नहीं हैं। लड़ाई कानून को लेकर है इसे दो समुदायों की लड़ाई न बनाया जाए।

आशीष, दिल्ली विश्वविद्यालय

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र ग